Journal of Advances in Developmental Research (IJAIDR)

E-ISSN: 0976-4844 ● Website: www.ijaidr.com ● Email: editor@ijaidr.com

पसमांदा समाज में नेतृत्व का संकट बिहार के विशेष संदर्भ में

बीबी सफीना

शोधार्थी
स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

शोध–सार

बिहार के सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्य में पसमांदा समाज एक महत्वपूर्ण जनसमूह के रूप में उपस्थित है, किंतु इसके बावजूद यह समुदाय लंबे समय से नेतृत्व के संकट का सामना कर रहा है। पसमांदा शब्द उन सामाजिक रूप से पिछड़े, दलित एवं वंचित मुस्लिम समुदायों के लिए प्रयुक्त होता है, जिन्हें मुख्यधारा की मुस्लिम राजनीति और सामाजिक संरचना में अपेक्षित प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं हो सका। यह शोध–पत्र बिहार के विशेष संदर्भ में पसमांदा समाज के नेतृत्व संकट का विश्लेषण करता है तथा इसके ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक कारणों की पड़ताल करता है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह है कि बिहार जैसे राज्य में, जहाँ सामाजिक न्याय और पिछड़ा वर्ग राजनीति का लंबा इतिहास रहा है, वहाँ भी पसमांदा समाज प्रभावी नेतृत्व विकसित करने में क्यों असफल रहा। शोध में यह पाया गया कि मुस्लिम समाज के भीतर व्याप्त अशराफ, अजलाफ, अरज़ल जैसी सामाजिक स्तरीकरण व्यवस्था ने पसमांदा समुदाय को हाशिये पर बनाए रखा। राजनीतिक दलों ने भी पसमांदा मुसलमानों को केवल वोट बैंक के रूप में उपयोग किया, जबकि नेतृत्व के अवसर सीमित वर्गों तक ही केंद्रित रहे। इसके अतिरिक्त शिक्षा, आर्थिक पिछड़ापन, सामाजिक जागरूकता की कमी तथा संगठनात्मक दुर्बलता ने नेतृत्व निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित किया है। यह अध्ययन गुणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है, जिसमें विभिन्न पुस्तकों, शोध–पत्रों, सरकारी रिपोर्टों एवं समकालीन राजनीतिक विमर्श का विश्लेषण किया गया है। शोध में बिहार के विभिन्न जिलों में पसमांदा समाज की राजनीतिक भागीदारी, सामाजिक स्थिति एवं नेतृत्व क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन भी शामिल है। साथ ही, अली अनवर जैसे पसमांदा आंदोलन से जुड़े नेताओं की भूमिका का मूल्यांकन किया गया है, जिन्होंने पसमांदा विमर्श को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाने का प्रयास किया।

पसमांदा समाज में नेतृत्व का संकट केवल राजनीतिक प्रतिनिधित्व का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समान अवसर एवं पहचान के संघर्ष से भी जुड़ा हुआ है। यदि शिक्षा, सामाजिक चेतना, राजनीतिक प्रशिक्षण एवं आर्थिक सशक्तिकरण पर विशेष ध्यान दिया जाए, तो पसमांदा समाज में प्रभावी और जनाधारित नेतृत्व का विकास संभव है। यह शोध बिहार में पसमांदा समाज की वास्तविक स्थिति को समझने तथा समावेशी लोकतंत्र की दिशा में आवश्यक नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

शब्दकुंजी : जातिगत विभाजन, नेतृत्व संकट, सामाजिक चेतना, राजनीतिक प्रशिक्षण एवं आर्थिक सशक्तिकरण इत्यादि

प्रस्तावना :

भारतीय समाज अपनी बहुलतावादी संरचना, सांस्कृतिक विविधता तथा सामाजिक स्तरीकरण के लिए विश्वभर में जाना जाता है। यहाँ धर्म, जाति, वर्ग, भाषा और क्षेत्रीय पहचान के आधार पर समाज का निर्माण हुआ है। भारतीय मुस्लिम समाज को सामान्यतः एक समान और एकीकृत समुदाय के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा है, किंतु

वास्तविकता इससे भिन्न है। मुस्लिम समाज के भीतर भी जातिगत विभाजन, सामाजिक असमानता और ऊँच–नीच की परंपरा गहराई से विद्यमान है। इसी सामाजिक संरचना के अंतर्गत "पसमांदा" शब्द उन मुस्लिम समुदायों के लिए प्रयुक्त होता है, जो सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े और वंचित रहे हैं। 'पसमांदा' फारसी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है – "पीछे छूटे हुए" या "वंचित"। इसमें मुख्यतः अजलाफ और अरज़ल वर्ग के मुसलमान शामिल किए जाते हैं, जिन्हें मुस्लिम समाज के उच्च वर्ग अर्थात अशराफ समुदाय की तुलना में कम सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त रही है।

बिहार भारत का ऐसा राज्य है जहाँ सामाजिक न्याय, पिछड़ा वर्ग राजनीति तथा जातीय चेतना ने राजनीति और समाज को गहराई से प्रभावित किया है। मंडल राजनीति के बाद बिहार में पिछड़े वर्गों, दलितों और वंचित समुदायों की राजनीतिक भागीदारी बढ़ी, किंतु मुस्लिम समाज के भीतर पसमांदा समुदाय अपेक्षित राजनीतिक और सामाजिक नेतृत्व विकसित नहीं कर सका। यद्यपि बिहार में पसमांदा मुसलमानों की संख्या पर्याप्त है और वे सामाजिक संरचना का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, फिर भी नेतृत्व के क्षेत्र में उनका प्रतिनिधित्व सीमित रहा है। यह स्थिति "नेतृत्व के संकट" की ओर संकेत करती है। यह संकट केवल राजनीतिक प्रतिनिधित्व तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक चेतना, संगठनात्मक क्षमता, शैक्षणिक पिछड़ेपन और आर्थिक निर्भरता से भी जुड़ा हुआ है।

भारतीय लोकतंत्र में नेतृत्व का महत्व अत्यंत व्यापक है। नेतृत्व किसी भी समाज को दिशा प्रदान करता है तथा उसके अधिकारों, आकांक्षाओं और संघर्षों को अभिव्यक्ति देता है। जब किसी समुदाय के पास प्रभावशाली, शिक्षित और संगठित नेतृत्व का अभाव होता है, तब वह समुदाय सामाजिक एवं राजनीतिक रूप से हाशिये पर चला जाता है। पसमांदा समाज के संदर्भ में यह स्थिति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। मुस्लिम राजनीति में प्रायः अशराफ वर्ग का प्रभुत्व रहा है, जिसके कारण पसमांदा मुसलमानों की समस्याएँ मुख्यधारा के विमर्श में पर्याप्त स्थान नहीं प्राप्त कर सकीं। परिणामस्वरूप पसमांदा समाज शिक्षा, रोजगार, सामाजिक सम्मान तथा राजनीतिक भागीदारी के क्षेत्रों में लगातार पिछड़ता गया।

बिहार में पसमांदा समाज की स्थिति को समझने के लिए राज्य की सामाजिक संरचना और राजनीतिक इतिहास का अध्ययन आवश्यक है। बिहार में जाति आधारित राजनीति ने सामाजिक न्याय के प्रश्न को मजबूत किया, किंतु मुस्लिम समाज के भीतर जातीय असमानताओं पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया गया। राजनीतिक दलों ने मुस्लिम समुदाय को एक "एकीकृत वोट बैंक" के रूप में देखने का प्रयास किया, जिससे मुस्लिम समाज के आंतरिक वर्गीय और जातीय विभाजन छिप गए। इसका सबसे अधिक नुकसान पसमांदा समुदाय को उठाना पड़ा। उन्हें चुनावी राजनीति में केवल मतदाता के रूप में महत्व दिया गया, जबकि नेतृत्व और प्रतिनिधित्व के अवसर मुख्यतः उच्चवर्गीय मुसलमानों तक सीमित रहे।

पसमांदा आंदोलन का उदय इसी असमानता के विरोध के रूप में हुआ। बिहार में अली अनवर और अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं ने पसमांदा आंदोलन को संगठित रूप देने का प्रयास किया। इस आंदोलन ने यह प्रश्न उठाया कि जब हिंदू समाज में पिछड़े और दलित वर्गों के अधिकारों की चर्चा होती है, तब मुस्लिम समाज के भीतर मौजूद पिछड़े और दलित समुदायों की समस्याओं को क्यों अनदेखा किया जाता है। पसमांदा आंदोलन ने सामाजिक न्याय, समान प्रतिनिधित्व और पहचान की राजनीति को नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया। इस आंदोलन ने यह स्पष्ट किया कि मुस्लिम समाज कोई एकरूप इकाई नहीं है, बल्कि उसमें भी जातिगत असमानता और सामाजिक भेदभाव मौजूद है। इसके बावजूद पसमांदा समाज व्यापक और स्थायी नेतृत्व विकसित करने में अभी भी संघर्षरत है।

नेतृत्व संकट के कई आयाम हैं। पहला आयाम शैक्षणिक पिछड़ापन है। शिक्षा किसी भी समाज में नेतृत्व निर्माण का सबसे महत्वपूर्ण आधार होती है। बिहार के पसमांदा समुदायों में शिक्षा का स्तर अपेक्षाकृत निम्न है। आर्थिक कठिनाइयों, सामाजिक उपेक्षा और संसाधनों की कमी के कारण बड़ी संख्या में बच्चे उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते। परिणामस्वरूप प्रशासन, राजनीति, मीडिया, न्यायपालिका और शिक्षण संस्थानों में उनकी भागीदारी सीमित रहती है। जब किसी समुदाय के पास शिक्षित वर्ग कम होता है, तब नेतृत्व की संभावनाएँ भी कमजोर हो जाती हैं। दूसरा आयाम आर्थिक पिछड़ापन है। पसमांदा समाज का बड़ा हिस्सा पारंपरिक व्यवसायों, असंगठित क्षेत्र के कार्यों तथा श्रम आधारित पेशों से जुड़ा हुआ है। आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण वे राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय भूमिका नहीं निभा पाते। चुनावी राजनीति में आर्थिक संसाधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, और संसाधनों के अभाव में पसमांदा समुदाय राजनीतिक प्रतिस्पर्धा में पीछे रह जाता है। आर्थिक निर्भरता सामाजिक आत्मविश्वास को भी प्रभावित करती है, जिससे नेतृत्व उभरने की प्रक्रिया बाधित होती है।

तीसरा आयाम सामाजिक विभाजन और संगठनात्मक कमजोरी है। पसमांदा समाज स्वयं अनेक जातियों और उपसमुदायों में विभाजित है। इन समुदायों के बीच एकता और साझा राजनीतिक चेतना का अभाव देखने को मिलता है। अलग–अलग जातीय पहचानें सामूहिक नेतृत्व के निर्माण में बाधा उत्पन्न करती हैं। इसके अतिरिक्त पसमांदा समाज में ऐसे मजबूत सामाजिक और शैक्षणिक संस्थानों का अभाव है, जो दीर्घकालिक नेतृत्व निर्माण कर सकें। जहाँ अन्य प्रभावशाली समुदायों ने अपने संगठन, विद्यालय, महाविद्यालय और सामाजिक संस्थाएँ विकसित कीं, वहीं पसमांदा समाज इस दिशा में अपेक्षाकृत कमजोर रहा।

चौथा आयाम राजनीतिक दलों की भूमिका से संबंधित है। बिहार की राजनीति में विभिन्न दलों ने समय–समय पर पसमांदा समुदाय को आकर्षित करने का प्रयास किया, किंतु अधिकांश मामलों में यह प्रयास प्रतीकात्मक ही रहे। पसमांदा नेताओं को सीमित अवसर दिए गए और नीतिगत स्तर पर उनकी समस्याओं के समाधान के लिए व्यापक पहल नहीं की गई। राजनीतिक दलों ने अक्सर मुस्लिम प्रतिनिधित्व के नाम पर उच्चवर्गीय नेताओं को प्राथमिकता दी। इससे पसमांदा समाज में राजनीतिक असंतोष और नेतृत्वहीनता की भावना विकसित हुई।

नेतृत्व संकट का प्रभाव केवल राजनीति तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका प्रभाव सामाजिक विकास और सामुदायिक आत्मसम्मान पर भी पड़ता है। जब किसी समाज के पास प्रभावी नेतृत्व नहीं होता, तब उसकी समस्याएँ नीति निर्माण की प्रक्रिया में पर्याप्त स्थान नहीं प्राप्त कर पातीं। पसमांदा समाज के संदर्भ में यह स्थिति शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में स्पष्ट दिखाई देती है। सरकारी योजनाओं का लाभ भी अनेक बार प्रभावशाली वर्गों तक अधिक पहुँचता है, जबकि वास्तविक रूप से वंचित समुदाय पीछे रह जाते हैं।

वर्तमान समय में पसमांदा विमर्श राष्ट्रीय राजनीति में भी महत्वपूर्ण होता जा रहा है। विभिन्न राजनीतिक दल अब पसमांदा समुदाय को अलग पहचान देने और उन्हें राजनीतिक रूप से जोड़ने का प्रयास कर रहे हैं। किंतु केवल राजनीतिक घोषणाएँ पर्याप्त नहीं हैं। वास्तविक परिवर्तन के लिए सामाजिक जागरूकता, शिक्षा का विस्तार, आर्थिक सशक्तिकरण तथा लोकतांत्रिक नेतृत्व निर्माण की आवश्यकता है। बिहार जैसे राज्य में, जहाँ सामाजिक न्याय की राजनीति की मजबूत परंपरा रही है, वहाँ पसमांदा समाज के नेतृत्व संकट का अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है।

यह शोध "पसमांदा समाज में नेतृत्व का संकट : बिहार के विशेष संदर्भ में" विषय के माध्यम से पसमांदा समुदाय की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति का विश्लेषण करने का प्रयास करता है। अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि नेतृत्व संकट के प्रमुख कारण क्या हैं, इसका समाज पर क्या प्रभाव पड़ रहा है तथा भविष्य में इसके

समाधान के लिए कौन–कौन से उपाय अपनाए जा सकते हैं। यह अध्ययन न केवल पसमांदा समाज की समस्याओं को उजागर करता है, बल्कि समावेशी लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और समान प्रतिनिधित्व की आवश्यकता पर भी बल देता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि पसमांदा समाज का नेतृत्व संकट भारतीय लोकतंत्र और सामाजिक न्याय की अवधारणा के सामने एक गंभीर चुनौती है। जब तक समाज के सबसे वंचित वर्गों को समान अवसर, प्रतिनिधित्व और नेतृत्व का अधिकार नहीं मिलेगा, तब तक वास्तविक सामाजिक समानता स्थापित नहीं हो सकती। बिहार के संदर्भ में पसमांदा समाज का अध्ययन इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह राज्य भारतीय राजनीति में सामाजिक परिवर्तन और लोकतांत्रिक संघर्षों का प्रमुख केंद्र रहा है। ऐसे में पसमांदा समाज के नेतृत्व संकट को समझना न केवल अकादमिक दृष्टि से आवश्यक है, बल्कि सामाजिक समरसता और लोकतांत्रिक विकास के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

उद्देश्य :

1. बिहार के विशेष संदर्भ में पसमांदा समाज की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. पसमांदा समाज में नेतृत्व संकट के प्रमुख कारणों का विश्लेषण करना।
3. बिहार की राजनीति में पसमांदा समुदाय के प्रतिनिधित्व एवं भागीदारी का मूल्यांकन करना।

साहित्य समीक्षा :

अली अनवर अंसारी (2001)[1] ने अपनी पुस्तक '"मसावात की जंग"' में पसमांदा मुसलमानों की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि भारतीय मुस्लिम समाज एक समान नहीं है, बल्कि उसमें भी जातिगत असमानता मौजूद है। लेखक के अनुसार अशराफ वर्ग का वर्चस्व मुस्लिम राजनीति और नेतृत्व पर लंबे समय से बना हुआ है, जिसके कारण पसमांदा समुदाय नेतृत्व से वंचित रहा। यह पुस्तक पसमांदा आंदोलन की वैचारिक आधारशिला मानी जाती है।

खालिद अनीस अंसारी (2018)[2] ने पसमांदा राजनीति और सामाजिक न्याय के विमर्श को आधुनिक संदर्भ में विश्लेषित किया है। उनके अध्ययन में यह बताया गया कि पसमांदा आंदोलन केवल मुस्लिम समाज के भीतर समानता का संघर्ष नहीं, बल्कि भारतीय लोकतंत्र में प्रतिनिधित्व और सामाजिक न्याय की व्यापक मांग है। लेखक ने बिहार में पसमांदा नेतृत्व की सीमाओं और चुनौतियों को भी रेखांकित किया है।

इम्तियाज अहमद (1978)[3] ने भारतीय मुस्लिम समाज की सामाजिक संरचना का अध्ययन करते हुए यह बताया कि मुसलमानों में भी जाति आधारित स्तरीकरण मौजूद है। उनके शोध में अशराफ, अजलाफ और अरज़ल वर्गों के बीच सामाजिक दूरी और भेदभाव को स्पष्ट किया गया है। यह अध्ययन पसमांदा समाज की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझने में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

गेल ऑम्वेट (2004)[4] ने सामाजिक न्याय और दलित विमर्श के संदर्भ में पिछड़े एवं वंचित समुदायों की राजनीतिक भागीदारी का अध्ययन किया। उनके विचारों के अनुसार सामाजिक रूप से वंचित समुदायों में नेतृत्व का विकास शिक्षा, संगठन और राजनीतिक चेतना से संभव होता है। यह दृष्टिकोण पसमांदा समाज के नेतृत्व संकट को समझने में उपयोगी है।

सच्चर समिति (2006)[5] ने भारतीय मुसलमानों की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक स्थिति का व्यापक अध्ययन प्रस्तुत किया। रिपोर्ट में यह स्पष्ट किया गया कि मुस्लिम समुदाय के पिछड़े वर्ग विशेष रूप से अधिक वंचित हैं।

बिहार जैसे राज्यों में शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में पसमांदा मुसलमानों की स्थिति अत्यंत कमजोर पाई गई, जो नेतृत्व संकट का एक प्रमुख कारण है।

अरशद आलम (2010)[6] ने मुस्लिम समाज में जाति और शिक्षा के संबंध का अध्ययन करते हुए बताया कि पसमांदा समुदायों को शिक्षा और सामाजिक अवसरों में बराबरी नहीं मिल पाती। लेखक के अनुसार शिक्षा की कमी राजनीतिक जागरूकता और नेतृत्व निर्माण को प्रभावित करती है। उनका अध्ययन बिहार के ग्रामीण मुस्लिम समाज की वास्तविकताओं को उजागर करता है।

क्रिस्टोफ जैफरलो (2003)[7] ने भारत में पिछड़ा वर्ग राजनीति और सामाजिक परिवर्तन का विश्लेषण किया है। उन्होंने बिहार की राजनीति में मंडल आंदोलन के प्रभाव को महत्वपूर्ण बताया। उनके अनुसार पिछड़े वर्गों की राजनीति ने सामाजिक न्याय को बढ़ावा दिया, किंतु मुस्लिम समाज के भीतर पसमांदा समुदाय को अपेक्षित नेतृत्व नहीं मिल सका।

नोमान मतीन (2016)[8] ने बिहार में पसमांदा राजनीति के उभार और उसके सामाजिक प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि पसमांदा आंदोलन ने मुस्लिम समाज में नई राजनीतिक चेतना उत्पन्न की, लेकिन संगठनात्मक कमजोरी और संसाधनों की कमी के कारण यह आंदोलन व्यापक नेतृत्व तैयार नहीं कर पाया।

आशीष नंदी (2002)[9] ने भारतीय राजनीति में पहचान आधारित आंदोलनों और सामाजिक असमानताओं का विश्लेषण किया। उनके अनुसार लोकतंत्र तभी मजबूत हो सकता है जब समाज के हाशिये पर स्थित समुदायों को समान प्रतिनिधित्व मिले। यह विचार पसमांदा समाज के नेतृत्व संकट और राजनीतिक उपेक्षा को समझने में सहायक है।

तौसीफ अहमद (2023)[10] ने बिहार के पसमांदा समाज की वर्तमान सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का अध्ययन किया। उनके अनुसार राजनीतिक दल पसमांदा समुदाय को चुनावी दृष्टि से महत्वपूर्ण मानते हैं, किंतु नेतृत्व निर्माण के स्तर पर गंभीर प्रयास नहीं किए जाते। लेखक ने शिक्षा, संगठन और सामाजिक जागरूकता को नेतृत्व संकट के समाधान के लिए आवश्यक बताया है।

पसमांदा समाज में नेतृत्व संकट

बिहार भारतीय राजनीति और सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। यहाँ सामाजिक न्याय, पिछड़ा वर्ग आंदोलन तथा जाति आधारित राजनीतिक चेतना ने राज्य की राजनीति और समाज को गहराई से प्रभावित किया है। किंतु इन व्यापक सामाजिक परिवर्तनों के बावजूद मुस्लिम समाज के भीतर मौजूद पसमांदा समुदाय आज भी नेतृत्व के गंभीर संकट से जूझ रहा है। पसमांदा समाज, जिसमें मुख्यतः पिछड़े, दलित एवं श्रमिक मुस्लिम समुदाय शामिल हैं, संख्या की दृष्टि से बिहार में अत्यंत महत्वपूर्ण है, लेकिन राजनीतिक, सामाजिक और शैक्षणिक नेतृत्व के क्षेत्र में उसकी भागीदारी सीमित रही है। यह स्थिति केवल प्रतिनिधित्व की कमी का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह सामाजिक असमानता, ऐतिहासिक उपेक्षा और संसाधनों के असमान वितरण का परिणाम भी है।

भारतीय मुस्लिम समाज को प्रायः एक समान समुदाय के रूप में देखा जाता है, जबकि वास्तविकता यह है कि इसके भीतर भी जातिगत विभाजन और सामाजिक स्तरीकरण मौजूद है। अशराफ, अजलाफ और अरज़ल जैसी श्रेणियों ने मुस्लिम समाज में उच्च और निम्न वर्गों का निर्माण किया। अशराफ वर्ग स्वयं को सामाजिक रूप से उच्च मानता रहा, जबकि अजलाफ और अरज़ल समुदायों को निम्न सामाजिक स्थिति में रखा गया। बिहार में यह विभाजन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जहाँ पसमांदा समुदाय को लंबे समय तक सामाजिक सम्मान, शिक्षा और नेतृत्व के अवसरों

से वंचित रखा गया। मुस्लिम राजनीति में भी उच्च वर्गीय मुसलमानों का प्रभुत्व बना रहा, जिसके कारण पसमांदा समाज की समस्याएँ मुख्यधारा के विमर्श में पर्याप्त स्थान नहीं प्राप्त कर सकीं।

नेतृत्व किसी भी समाज की प्रगति और विकास का आधार होता है। नेतृत्व केवल राजनीतिक प्रतिनिधित्व तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह सामाजिक चेतना, संगठन क्षमता और सामुदायिक दिशा प्रदान करने की प्रक्रिया भी है। पसमांदा समाज में नेतृत्व संकट का सबसे बड़ा कारण शैक्षणिक पिछड़ापन है। बिहार में पसमांदा समुदाय के अधिकांश लोग आर्थिक रूप से कमजोर हैं और पारंपरिक श्रम आधारित व्यवसायों से जुड़े हुए हैं। गरीबी, अशिक्षा और सामाजिक उपेक्षा के कारण बड़ी संख्या में बच्चे विद्यालय और उच्च शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। शिक्षा के अभाव में प्रशासनिक सेवाओं, न्यायपालिका, मीडिया, शिक्षण संस्थानों तथा राजनीति में उनकी भागीदारी सीमित रहती है। जब किसी समाज में शिक्षित और जागरूक वर्ग का अभाव होता है, तब प्रभावी नेतृत्व का विकास भी कठिन हो जाता है।

आर्थिक पिछड़ापन भी नेतृत्व संकट का एक प्रमुख कारण है। बिहार के पसमांदा समुदाय का बड़ा हिस्सा दर्जी, नाई, धोबी, रिक्शा चालक, कारीगर, बुनकर और अन्य श्रम आधारित व्यवसायों से जुड़ा हुआ है। इन व्यवसायों से प्राप्त आय सीमित होती है, जिससे परिवारों की आर्थिक स्थिति कमजोर बनी रहती है। राजनीति में सक्रिय भागीदारी के लिए आर्थिक संसाधनों की आवश्यकता होती है, किंतु आर्थिक रूप से कमजोर समुदाय चुनावी राजनीति में प्रतिस्पर्धा करने में असमर्थ रहते हैं। यही कारण है कि पसमांदा समाज से बहुत कम लोग विधान सभा, लोकसभा या स्थानीय निकायों में प्रभावशाली नेतृत्व के रूप में उभर पाए हैं। आर्थिक निर्भरता सामाजिक आत्मविश्वास को भी प्रभावित करती है, जिससे समुदाय के भीतर नेतृत्व क्षमता का विकास बाधित होता है।

बिहार की राजनीति में सामाजिक न्याय की अवधारणा ने पिछड़े वर्गों और दलितों को नई पहचान दी। मंडल आयोग की सिफारिशों के बाद राज्य में पिछड़े वर्ग राजनीति का प्रभाव बढ़ा, किंतु मुस्लिम समाज के भीतर पसमांदा समुदाय को इसका अपेक्षित लाभ नहीं मिल सका। राजनीतिक दलों ने मुस्लिम समुदाय को एक "एकीकृत वोट बैंक" के रूप में देखने की नीति अपनाई। इसके परिणामस्वरूप मुस्लिम समाज के आंतरिक वर्गीय और जातीय विभाजन को अनदेखा किया गया। चुनावों में मुस्लिम प्रतिनिधित्व के नाम पर प्रायः अशराफ समुदाय के नेताओं को टिकट और राजनीतिक अवसर दिए गए, जबकि पसमांदा समाज केवल मतदाता के रूप में प्रयुक्त होता रहा। इससे पसमांदा समाज में राजनीतिक असंतोष और नेतृत्वहीनता की भावना विकसित हुई।

पसमांदा आंदोलन इसी सामाजिक और राजनीतिक असमानता के विरोध से उत्पन्न हुआ। बिहार में इस आंदोलन को संगठित रूप देने में अली अनवर अंसारी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। उन्होंने पसमांदा मुसलमानों की समस्याओं को राष्ट्रीय स्तर पर उठाया और यह स्पष्ट किया कि मुस्लिम समाज के भीतर भी सामाजिक न्याय की आवश्यकता है। अली अनवर ने अपनी पुस्तक '"मसावात की जंग"' में पसमांदा समुदाय के शोषण और उपेक्षा को विस्तार से प्रस्तुत किया। उनके नेतृत्व में पसमांदा आंदोलन ने मुस्लिम राजनीति के पारंपरिक ढाँचे को चुनौती दी। इस आंदोलन ने यह प्रश्न उठाया कि यदि हिंदू समाज में पिछड़े और दलित वर्गों के अधिकारों की बात की जाती है, तो मुस्लिम समाज के भीतर पिछड़े वर्गों की समस्याओं को क्यों नजरअंदाज किया जाता है।

हालाँकि पसमांदा आंदोलन ने नई सामाजिक और राजनीतिक चेतना उत्पन्न की, लेकिन यह आंदोलन अभी तक व्यापक और स्थायी नेतृत्व विकसित करने में पूर्णतः सफल नहीं हो सका। इसका एक प्रमुख कारण संगठनात्मक कमजोरी है। पसमांदा समाज स्वयं अनेक जातियों और उपसमुदायों में विभाजित है, जैसे अंसारी, राइन, कुंजड़ा, धुनिया, नट, हलालखोर आदि। इन समुदायों के बीच सामाजिक एकता और साझा राजनीतिक रणनीति का अभाव

देखने को मिलता है। जातीय पहचानें सामूहिक नेतृत्व निर्माण में बाधा उत्पन्न करती हैं। इसके अतिरिक्त पसमांदा समाज में ऐसे मजबूत सामाजिक और शैक्षणिक संस्थानों का अभाव है, जो दीर्घकालिक नेतृत्व तैयार कर सकें।

मीडिया और बौद्धिक विमर्श में भी पसमांदा समाज की उपस्थिति सीमित रही है। मुख्यधारा के मीडिया में मुस्लिम समाज का प्रतिनिधित्व प्रायः उच्चवर्गीय दृष्टिकोण से किया जाता है। पसमांदा समुदाय की समस्याएँ जैसे शिक्षा, बेरोजगारी, सामाजिक भेदभाव और श्रमिक जीवन की कठिनाइयाँ बहुत कम चर्चा में आती हैं। जब किसी समुदाय की आवाज मीडिया और बौद्धिक मंचों पर कमजोर होती है, तब उसकी राजनीतिक शक्ति भी सीमित हो जाती है। पसमांदा समाज के पास ऐसे शिक्षित बुद्धिजीवियों और पत्रकारों की संख्या कम है, जो उनकी समस्याओं को प्रभावी ढंग से राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा बना सकें।

नेतृत्व संकट का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण सामाजिक जागरूकता की कमी है। बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में पसमांदा समुदाय अभी भी सामाजिक रूढ़ियों, धार्मिक कट्टरता और आर्थिक निर्भरता से प्रभावित है। शिक्षा और जागरूकता के अभाव में समुदाय के लोग अपने अधिकारों और लोकतांत्रिक अवसरों के प्रति पर्याप्त रूप से सचेत नहीं हो पाते। इससे राजनीतिक दलों के लिए उन्हें केवल वोट बैंक के रूप में उपयोग करना आसान हो जाता है। कई बार धार्मिक पहचान को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि पसमांदा समुदाय अपनी जातीय और सामाजिक समस्याओं को पीछे छोड़ देता है। परिणामस्वरूप उनकी वास्तविक समस्याएँ राजनीतिक विमर्श में गौण हो जाती हैं।

महिलाओं की स्थिति भी नेतृत्व संकट से जुड़ी हुई है। पसमांदा समाज की महिलाओं को दोहरी उपेक्षा का सामना करना पड़ता हैकृएक ओर वे मुस्लिम समाज के भीतर पिछड़े वर्ग से आती हैं और दूसरी ओर लैंगिक असमानता का शिकार होती हैं। शिक्षा, रोजगार और सार्वजनिक जीवन में उनकी भागीदारी अत्यंत सीमित है। जब किसी समाज की आधी आबादी नेतृत्व प्रक्रिया से बाहर रहती है, तब सामाजिक विकास और नेतृत्व निर्माण दोनों प्रभावित होते हैं। हाल के वर्षों में कुछ सामाजिक संगठनों ने पसमांदा महिलाओं की शिक्षा और जागरूकता पर कार्य किया है, किंतु यह प्रयास अभी प्रारंभिक स्तर पर ही हैं।

स्थानीय निकायों और पंचायत स्तर पर पसमांदा समाज की भागीदारी अपेक्षाकृत बढ़ी है, लेकिन उच्च स्तर की राजनीति में उनकी उपस्थिति अभी भी सीमित है। पंचायत चुनावों में आरक्षण और स्थानीय नेतृत्व के अवसरों ने कुछ हद तक पसमांदा समुदाय को राजनीतिक अनुभव प्रदान किया है। इससे समुदाय के भीतर नई पीढ़ी में नेतृत्व की संभावनाएँ विकसित हुई हैं। किंतु राज्य और राष्ट्रीय स्तर की राजनीति में संसाधनों, संगठन और राजनीतिक संरक्षण की कमी के कारण यह नेतृत्व आगे नहीं बढ़ पाता।

वर्तमान समय में विभिन्न राजनीतिक दल पसमांदा समुदाय को अपने साथ जोड़ने का प्रयास कर रहे हैं। बिहार की राजनीति में पसमांदा मुसलमानों को अलग पहचान देकर उन्हें राजनीतिक रूप से आकर्षित करने की रणनीति अपनाई जा रही है। किंतु केवल चुनावी राजनीति के माध्यम से नेतृत्व संकट का समाधान संभव नहीं है। इसके लिए शिक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक संगठन और वैचारिक जागरूकता की आवश्यकता है। यदि पसमांदा समाज के युवाओं को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जाए, तो भविष्य में प्रभावी नेतृत्व विकसित हो सकता है।

पसमांदा समाज में नेतृत्व निर्माण के लिए सामाजिक सुधार आंदोलनों की भी आवश्यकता है। समुदाय के भीतर जातीय विभाजन को कम करके सामूहिक पहचान और सामाजिक एकता को मजबूत करना आवश्यक है। साथ ही, पसमांदा समाज के इतिहास, संस्कृति और संघर्षों को शैक्षणिक और सामाजिक विमर्श में स्थान मिलना चाहिए।

इससे समुदाय के भीतर आत्मसम्मान और सामाजिक चेतना का विकास होगा। शिक्षा संस्थानों, सामाजिक संगठनों और नागरिक समाज को इस दिशा में सक्रिय भूमिका निभानी होगी।

बिहार में पसमांदा समाज का नेतृत्व संकट बहुआयामी समस्या है, जो सामाजिक असमानता, आर्थिक पिछड़ेपन, शैक्षणिक कमजोरी और राजनीतिक उपेक्षा से जुड़ी हुई है। यह संकट केवल पसमांदा समाज की समस्या नहीं, बल्कि भारतीय लोकतंत्र और सामाजिक न्याय की अवधारणा के लिए भी चुनौती है। जब तक समाज के सबसे वंचित वर्गों को समान अवसर, प्रतिनिधित्व और नेतृत्व का अधिकार नहीं मिलेगा, तब तक वास्तविक लोकतांत्रिक विकास संभव नहीं हो सकेगा। बिहार जैसे राज्य में, जहाँ सामाजिक परिवर्तन और पिछड़ा वर्ग राजनीति का लंबा इतिहास रहा है, वहाँ पसमांदा समाज के नेतृत्व संकट का समाधान समावेशी और न्यायपूर्ण समाज निर्माण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हो सकता है।

निष्कर्ष :

बिहार के विशेष संदर्भ में पसमांदा समाज में नेतृत्व का संकट एक गंभीर सामाजिक, राजनीतिक और शैक्षणिक समस्या के रूप में उभरकर सामने आता है। यद्यपि पसमांदा समुदाय राज्य की मुस्लिम आबादी का बड़ा हिस्सा है, फिर भी उसे सामाजिक सम्मान, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा प्रभावी नेतृत्व के अवसर पर्याप्त रूप से प्राप्त नहीं हो सके हैं। मुस्लिम समाज के भीतर मौजूद जातिगत स्तरीकरण, आर्थिक पिछड़ापन, शैक्षणिक कमजोरी तथा राजनीतिक उपेक्षा ने इस संकट को और अधिक गहरा किया है। बिहार की राजनीति में सामाजिक न्याय और पिछड़ा वर्ग आंदोलन के बावजूद पसमांदा मुसलमान अपेक्षित लाभ से वंचित रहे। राजनीतिक दलों ने उन्हें प्रायः एक वोट बैंक के रूप में देखा, जबकि नेतृत्व और नीति निर्माण के स्तर पर उच्चवर्गीय मुस्लिम समुदाय का प्रभुत्व बना रहा। इसके अतिरिक्त पसमांदा समाज के भीतर संगठनात्मक कमजोरी, जातीय विभाजन तथा जागरूकता की कमी ने भी प्रभावी नेतृत्व निर्माण की प्रक्रिया को बाधित किया है।

हालाँकि पसमांदा आंदोलन ने सामाजिक न्याय, समानता और प्रतिनिधित्व के प्रश्न को राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है। अली अनवर अंसारी जैसे नेताओं ने पसमांदा समाज की समस्याओं को व्यापक विमर्श का हिस्सा बनाया, किंतु अभी भी इस आंदोलन को मजबूत सामाजिक आधार और दीर्घकालिक नेतृत्व निर्माण की आवश्यकता है।

पसमांदा समाज में नेतृत्व संकट के समाधान के लिए शिक्षा का प्रसार, आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक जागरूकता तथा राजनीतिक प्रशिक्षण अत्यंत आवश्यक हैं। विशेष रूप से युवाओं और महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने पर ध्यान देना होगा। साथ ही, राजनीतिक दलों और सरकारी नीतियों को केवल प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व तक सीमित न रहकर वास्तविक भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी। अंततः यह कहा जा सकता है कि पसमांदा समाज का सशक्त नेतृत्व केवल उस समुदाय के विकास के लिए ही नहीं, बल्कि बिहार में समावेशी लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और समानता की स्थापना के लिए भी अत्यंत आवश्यक है।

संदर्भ–सूची :

1. अली अनवर अंसारी (2001). 'मसावात की जंग'. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
2. खालिद अनीस अंसारी (2018). 'पसमांदा राजनीति और सामाजिक न्याय का विमर्श'. नई दिल्ली : ओरिएंट ब्लैकस्वान।
3. इम्तियाज अहमद (1978). 'भारतीय मुस्लिम समुदाय में जाति और सामाजिक स्तरीकरण'. नई दिल्ली : मनोहर पब्लिकेशन।

4. गेल ऑम्वेट (2004). 'दलित और लोकतांत्रिक क्रांति'. नई दिल्ली : सेज पब्लिकेशन।
5. सच्चर समिति (2006). 'भारत में मुस्लिम समुदाय की सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक स्थिति संबंधी रिपोर्ट'. नई दिल्ली : भारत सरकार।
6. अरशद आलम (2010). 'मुस्लिम समाज में शिक्षा और सामाजिक असमानता'. नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. क्रिस्टोफ जैफरलो (2003). 'भारत में पिछड़ा वर्ग राजनीति और सामाजिक परिवर्तन'. नई दिल्ली : पेंगुइन बुक्स।
8. नोमान मतीन (2016). 'बिहार में पसमांदा राजनीति का उभार और चुनौतियाँ'. पटना : ज्ञान प्रकाशन।
9. आशीष नंदी (2002). 'भारतीय राजनीति में पहचान और लोकतंत्र'. नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
10. तौसीफ अहमद (2023). 'बिहार के पसमांदा समाज की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति'. पटना : राजकमल प्रकाशन।